International Journal of Engineering, Management, Humanities and Social Sciences Paradigms (IJEMHS)
Volume 35, Issue 02 and Publication Date: 22nd April, 2023
An Indexed, Referred and Peer Reviewed Journal
ISSN (Online): 2347-601X
www.ijemhs.com

औपनिवेशिक काल में मुस्लिम समाज में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना का विकास : एक अध्ययन

विवेकानन्द कुमार
शोध छात्र, इतिहास विभाग, बी. एन. एम. यू., मधेपुरा, बिहार

सार

1857 ई. के बाद सैयद अहमद खाँ ने निरंतर मुसलमान समुदाय की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक उन्नति के लिए चिन्तन करना तथा अपने चिन्तन के विषय को क्रिया के रूप में परिणत करने का काम करना प्रारंभ किया। वे कुलीन खानदान के थे, अतः कुलीन वर्ग के उपर ही उनके चिन्तन और कार्यों का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। मुसीबत के घिरे मुसलमानों की ओर उनका ध्यान नहीं गया। इतिहासकार ताराचंद लिखते हैं कि ''निचले वर्गों पर धीरे–धीरे छा जानेवाली गरीबी पर किसी का ध्यान नहीं गया था और उनका भी ध्यान नहीं गया। चारों तरफ फैली मुसीबत के सम्बन्ध में उन्होंने बहुत कम जागरूकता दिखलाई, इसलिए उनके सारे प्रयास उस वर्ग के उत्थान के लिए थे जो पहले प्रभावशाली और शक्तिशाली थे और जिसके शानदार कारनामों से इतिहास के पन्ने भरे हुए थे और मुस्लिम समाज को जिस पर बहुत गर्व था।''

विस्तार

सैयद अहमद खाँ के चिन्तन का यह एक बहुत ही प्रमुख विषय था कि अंग्रेजों के शासन के अधीन रहकर ही मुसलमानों की स्थिति को उन्नतशील करने का प्रयास करना चाहिए। इसका अर्थ यह था कि सैयद अहमद और उनके समर्थक भारत में अंगरेजी सत्ता के बने रहने के पक्ष में थे। उनका विश्वास था कि इस विदेशी सत्ता की छत्रछाया में ही उनकी बिरादरी की स्थिति समुन्नत हो सकती थी। सैयद अहमद का कहना था कि मुसलमानों और अंगरेजों के मध्य जो भी आपसी संदेह और द्वेष की भावना है उसे दूर करना चाहिए। वे चाहते थे कि अंगरेजों को इस बात का विश्वास दिलाया जाए कि मुसलमान उनके शासन के सहयोगी थे, शत्रु

नहीं। उन्होंने लाहौर में 1853 ई. में भाषण देते हुए यह कहा था कि ''मुसलमानों का अंगरेजों से शत्रुता रखना वैसा ही होगा जैसा नदी में रहकर मगरमच्छ से बैर रखना। इसलिए, उनके लिये यह आवश्यक है कि वे उनसे मैत्री रखें।'' प्रतिदान में वे केवल चाहते थे कि अंगरेजी सरकार मुसलमानों के हितों की रक्षा करे और उनके धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करे।

इसी उद्देश्य से सर सैयद अहमद ने इस्लाम की नई व्याख्या भी की। ताराचंद ने लिखा है कि तीन कारणों के चलते उन्होंने इस्लाम की एक क्रांतिकारी व्याख्या प्रस्तुत की। पहला, विदेशी ईसाई मिशनरियाँ इस्लाम के नियमों और रीति–नीति (रिवाजों) से घृणा तो करती ही थी, इस्लाम से भी घृणा करती थी। अपने लेखन कार्य के द्वारा मिशनरियों ने इस्लाम की तीखी भर्त्सना की और शिक्षण संस्थाओं पर इस आलोचना एवं भर्त्सना का प्रभावशाली असर पड़ रहा था। मिशनरियों की बिरादरी के लोग ही प्रशासक थे और ईसाई धर्मप्रचारकों की पहुँच बड़े–बड़े पदाधिकारियों तक थी। अतः इस्लाम की रक्षा के लिए उसे नए रूप में ढ़ालना था ताकि विरोधी आलोचकों का तगड़ा जवाब दिया जा सके। दूसरा, भारत का मुस्लिम समाज राजनीतिक दृष्टि से उदासीन तथा गौरवहीन, सामाजिक दृष्टि से अमर्यादित और निराश तथा आर्थिक दृष्टि से दरिद्र हो चुका था। अतः, ऐसे गिरे समाज पर आक्रमण करने के लिए किसी को भी तत्काल मसाला मिल सकता था। इस्लाम की नई व्याख्या करके मुसलमानों में आत्मसम्मान की भावना जगाना अत्यावश्यक था। इससे भी बड़ी बात यह थी कि धर्म पर जो कुसंस्कार और कुफ्र की परतें चढ़ गईं थी उनको दूर करना था। तीसरा, ''पाश्चात्य विचारों और शिक्षा के विस्तार से इस्लामी आस्था के बहुमूल से नष्ट होने का खतरा दिखाई दे रहा था। आधुनिक विज्ञान की चुनौती से लोहा लेना था। अपने इन विचारों को क्रियात्मक रूप देकर सफल बनाना सैयद अहमद के लिए संभव नहीं था क्योंकि इसे सफल बनाने के लिए जिस प्रकार की शास्त्रीय विद्वता की जरूरत थी, सर सैयद अहमद खाँ में वह नहीं थी।''

सैयद अहमद मुस्लिम समाज में सुधार लाना चाहते थे। इन दिनों यह समाज अनेकानेक बुराइयों का शिकार था। वे इन बुराइयों को दूर करना चाहते थे। इसके

अतिरिक्त उन्होंने पुरानी शिक्षा की जगह मुसलमानों के लिए नई दिशा की दलील दी। सच पूछा जाए तो अलीगढ़ आंदोलन का एक मुख्य अंग शिक्षा ही थी।

अलीगढ़ आंदोलन– यद्यपि सैयद अहमद खाँ में शास्त्रीय विद्वता का अभाव था, तथापि उनमें प्रबल साहस और अटूट जोश था। उन्होंने अपने विचारों का प्रचार किया और मुसलमानों ने उन विचारों का स्वागत किया। मुस्लिम समाज में सुधार और जागरण लाने के लिए उन्होंने अलीगढ़ आंदोलन के तीन मुख्य मुद्दे बनाए– इस्लाम की नई व्याख्या, समाज–सुधार और पुरानी शिक्षा की जगह नई अर्थात् पश्चिमी शिक्षा का अनुग्रहण।

इसबात का उल्लेख किया जा चुका है कि परम्परागत इस्लाम कई कुरीतियाँ तथा अंधविश्वासों का शिकार हो चुका था जिस पर अंग्रेज भी कीचड़ उछाल रहे थे। ऐसा इस्लाम मुसलमानों के समाज की प्रगति के मार्ग में बाधक सिद्ध रहा था। अतः, इस समाज को नई दिशा देने के लिए सैयद अहमद ने इस्लाम की नई व्याख्या प्रस्तुत की। वे जानते थे कि '' ईसाई मिशनरियों और आलोचक लेखकों से लोहा लेने का उपाय यह था कि उनके विरूद्ध के अस्त्रों का सहारा लिया जाए। यदि वे ज्ञान और विज्ञान के नाम पर उनके उपर हमला बोल रहे थे, तो उन्हें भी उसी भाषा में उसका जवाब देना चाहिए।''

सर सैयद अहमद की इस्लाम की क्रांतिकारी व्याख्या उलेमा से भिन्न थी। उन्होंने अपनी व्याख्या में इस तथ्य पर बल दिया कि ''कुरान की शिक्षा युक्ति और प्रकृति के बिल्कुल अनुरूप है।'' धर्म की व्याख्या करते हुए उन्होंने कुरान की शिक्षा को ईश्वरीय और चिरंतन बतलाया। उन्होंने यह कहा कि हदीस में पैगम्बर मुहम्मद की उक्तियाँ हैं। उनका यह कहना था कि सांसारिक मामले में हदीस का हुक्म नहीं भी माना जा सकता है, किन्तु धर्म के मामले में हदीस के अनुसार आचरण करना अनिवार्य है। उन्होंने मानव मन की इच्छाशक्ति को स्वतंत्र बतलाया तथा आत्मा, भाग्य, देववाणी, देवदूत, शैतान आदि के संबंध में विश्वास प्रकट किया और कहा कि ईश्वर है क्योंकि यह सृष्टि है। वह कुरान को ईश्वरवाणी मानकर ''उसे अर्थ और शब्द दोनों में अमर मानते थे।'' वे काफिर को स्वीकार नहीं करते थे क्योंकि उनका विश्वास था कि व्यक्ति प्रकृति और ईश्वराज्ञा के अधीन है और इस्लाम अथवा कुरान

में विश्वास नहीं करके भी वह प्रकृति तथा ईश्वर को ठुकरा नहीं सकता है।

सैयद अहमद खाँ ने कुरान और हदीस से कुछ आयतों को निकालकर उनका अपने ढ़ंग से विश्लेषण करते हुए यह बतलाने का प्रयास किया कि ''अंगरेजों के अधीन भारत दारूल इस्लाम और दारूल हर्ब दोनों था। (दारूल इस्लामवाले देश में राजसत्ता मुसलमानों के हाथ में और दारूल हर्ब वाले देश में यह गैर–मुसलमानों के हाथ में होती है।) इस्लामी चिन्तनधारा में इन दोनों शब्दों का विशेष स्थान है। दारूल इस्लाम में मुसलमानों को जिहाद करने का अधिकार नहीं था। सैयद अहमद ने बड़ी बुद्धिमानी तथा चतुराई के साथ कुरान तथा हदीस के आयतों का यह अर्थ प्रस्तुत किया था। उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को आधार बनाकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया था कि मुसलमान और ईसाई सदा से मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित किए हुए थे। उनके कहने का विशेष अर्थ यह था कि जब तक ब्रिटिश सरकार से भारत के मुसलमानों को संरक्षण एवं सहयोग मिलता रहेगा तब तक मुसलमान उनके शासन के विरूद्ध जिहाद नहीं कर सकते हैं। इतना ही नहीं, सैयद अहमद ने मुसलमानों को ईसाईयों के धर्म–ग्रंथ बाइबिल की ओर मुखातिब करने का प्रयास किया। उन्होंने इस्लाम और ईसाई धर्म में समानता बतलाई और इस संबंध में 'तंबयनउल कलाम' नामक पुस्तक की रचना भी कर डाली। उन्होंने इन दोनों धर्मों के अनुयायियों के बीच सामाजिक संबंध भी कायम करने का प्रयास किया । उन्होंने मुसलमानों को ईसाईयों के साथ बैठकर भोजन करने का भी परामर्श दिया। इसके लिए उन्होंने ताआम–अहल–ए–किताब नामक एक अन्य पुस्तक की रचना की। संक्षेप में उन्होंने कुरानशरीफ में कोई हस्तक्षेप नहीं दिया। धर्म की नई व्याख्या करके उनहोंने भारतीय मुसलमानों और ईसाईयों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने अंगरेजों की कृपा तथा सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया ताकि उनके सहयोग से मुसलमानों की स्थिति में सुखद परिवर्तन आ जाए और वे हिन्दुओं की बराबरी में आ जाएँ। इसलिए उन्होंने धर्म का सहारा लेकर अंगरेजों को यह विश्वास दिलाया कि मुसलमान उनके शासन के खिलाफ कभी भी जिहाद नहीं करेंगे।

सर सैयद अहमद अँगरेजी सरकार के प्रति भक्ति भाव को धार्मिक कर्तव्य

समझते थे। 1884 ई. में उन्होंने जालंधर में भाषण देते हुए कहा कि ''मैंने सरकार की कोई सेवा नहीं की बल्कि जो कुछ मैंने किया है वह अपने पवित्र धर्म और सच्चे हादी (धार्मिक मार्ग–दर्शक) की आज्ञाओं का पालन किया है। हमारे सच्चे हादी ने आदेश दिया है कि तुम जिस सरकार के अधीन हो उसकी आज्ञा का पालन करो..... जो कुछ सरकार की सेवा मुझसे हुई है वह वास्तव में मेरे धर्म की सेवा थी।'' एक अन्य अवसर उन्होंने कहा– ''हमें देखना चाहिए कि ईश्वर की इच्छा क्या है.... इस समय में हमें ईश्वर की मर्जी यह प्रतीत होती है कि अंगरेज शान से भारत में राज्य करे और हम उनके अधीन रहें और जो कुछ लाभ संभव हो उनसे प्राप्त करें।'' मेरठ की एक सभा का संबोधन करते हुए उन्होंने कहा– ''इन प्रांतो के हिन्दू हमारा साथ छोड़कर बंगालियों के साथ मिल गए हैं। तब हमें उस कौम के साथ मिल जाना चाहिए जिसके साथ हम मिल सकते हैं.... कोई मुसलमान इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि ईसाईयों के अतिरिक्त किसी धर्म के अनुयायी मुसलमानों के मित्र नहीं हो सकते। जिसने कुरान पढ़ा है और जो इस पर यकीन रखता है वह जान सकता है कि हमारी कौम किसी अन्य कौम से मित्रता और हमदर्दी की आशा नहीं कर सकती..... हमें ईश्वर की आज्ञाओं के अनुसार ईसाईयों के प्रति निष्ठावान् और मित्रतापूर्ण बना रहना चाहिए।'' इन उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सैयद अहमद धर्म का सहारा लेकर सरकार का सहयोग प्राप्त करना चाहते थे ताकि मुसलमानों के हितों की रक्षा के लिए अंगरेज कवच बन जाएँ। सर सैयद अहमद भारतीय राजनीति के प्रथम नेता थे जिन्होंने राजनीति का आधार धर्म के आर्दशों को बनाया।

यह सब कुछ होते हुए भी सैयद अहमद धार्मिक सहिष्णुता में विश्वास करते थे। उनका कहना था कि सभी धर्मों के अंदर एकता का भाव छिपा है जिसे व्यावहारिक नैतिकता कहा जा सकता है। इस धारणा के आधार पर कि किसी व्यक्ति का धर्म उनका निजी मामला है, उन्होंने व्यक्तिगत संबंधों में धर्माधता के लक्षणों की स्पष्ट रूप से निन्दा की।

सैयद अहमद ने समाज–सुधार के भी काम किए। उनके सामाजिक विचार भी धार्मिक विचार की तरह स्वतंत्र थे। मुसलमानों का समाज हिन्दुओं के समाज की

तरह कई कुरीतियों का शिकार हो गया था। समाज में दास–प्रथा प्रचलित थी। बहु–विवाह की प्रथा भी घर कर गई थी। जिहाद, सूदखोरी और युद्ध–बंदियों से संबंधित समस्याएँ भी थीं। इनके निवारणार्य कदम उठाना था। इन कुरीतियों से बचने के लिए उन्होंने मुसलमानों को कहा कि वे इस्लाम के नियमों तथा उपदेशों का अनुशीलन करें। उन्होंने बतलाया कि इस्लाम दासों के प्रति कठोर व्यवहार करने की आज्ञा नहीं देता है बल्कि इसने उनके लिए उदार नियम बनाया है जो दासों के जीवन और चरित्र में परिवर्तन लाने की क्षमता रखते हैं। उन्होंने सामान्य परिस्थिति में बहु–विवाह का बहिष्कार किया, किन्तु विशेष परिस्थिति में पुरूषों के लिए बहु–विवाह को स्वीकार किया। उन्होंने जिहाद का समर्थन नहीं किया, किन्तु यहा कहा कि अगर कोई गैर–मुसलमान शक्ति इस्लाम अथवा मुस्लिम सम्प्रदाय पर आक्रमण करती है तब मुसलमान जिहाद कर सकते हैं। उन्होंने सूदखोरी के रिवाज की भी निन्दा की, किन्तु वह सारे सूद के प्रकार को समाप्त करने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने युद्ध–बंदियों के प्रति भी उदारता दिखलाने के लिए तत्परामर्श दिया और यह कहा कि 'युद्ध में पकड़े गए बंदियों को मारना और स्त्रियों को गुलाम बनाना जरूरी नहीं है।' उन्होंने खिलाफत को स्वीकार नहीं किया।

उपसंहार

सैयद अहमद **उ**नका कहना था कि पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के तीन दशक बाद इमामहसन के साथ ही खिलाफत समाप्त हो गई। ऐसा कहकर उन्होंने अंगरेज शासकों के प्रति सारे मुसलमानों को निष्ठावान् बने रहने को कहा। यद्यपि कुछ कट्टर मुसलमानों ने सैयद अहमद के धार्मिक तथा सामाजिक विचारों का विरोध किया और उन्हें 'काफिर' तक कहा एवं उनके विरूद्ध कई फतवें निकाले, किन्तु सैयद अहमद साहसपूर्वक अपने विचार पर अडिग रहे अन्त में परम्परावादी मुसलमान शान्त हो गए। सैयद अहमद के विचारों को मुसलमानों ने, विशेषकर पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त मुसलमानों ने स्वीकार किया। अलीगढ़ आंदोलन का क्षेत्र व्यापक होने लगा।

–: संदर्भ :–

1. अहमद, अतीक, सर सैयद लेख संचय, अलीगढ़, 1996 ।

2. अजीज, के. के., द मेकिंग ऑफ पाकिस्तान, आसारे सनादीद, दिल्ली 1985 ई0, अलवावे बगावते हिन्द, दिल्ली, 1886 ।

3. अग्रवाल, आर0 एन0—नेशनल मूवमेंट एंड कन्स्टीच्यूशनल डेवलपमेंट इन इंडिया, दिल्ली 1959 ।

4. अग्रवाल, आर. सी. — कस्टीट्यूशनल हिस्ट्री ऑफ इंडिया एंड नेशनल मूवमेंट, मुम्बई 1959 ।

5. अहमद, अजीज— स्टडीज इन इस्लामिक रीलीजन इन द इंडियन इन्नवायरमेंट, आक्सप फोर्ड, 1964।

6. अर्नोल्ड—द प्रोविंग ऑफ इस्लाम, वेस्टमिनस्टर, 1895।

7. अलबरूनी—इंडिया, एडवर्ड सचाओ, लंदन, 1910

8. अहमद, खुर्शीद—इस्लामिक लॉ एंड कान्स्टीच्युशन, दिल्ली 1990

9. अम्बेडकर, बी.आर.—पाकिस्तान, दिल्ली, 1942